REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 13 | ISSUE - 1 | OCTOBER - 2023

द्विवेदीयुगीन पत्रकारिता में साहित्यिक विवाद

Dr. Rupam Kumari
Department of Hindi , Ranchi University.

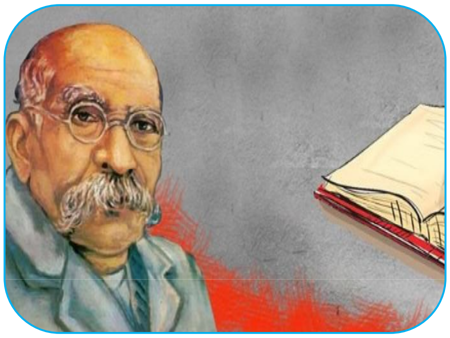

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (6 मई 1864 - 21 दिसंबर 1938) जितने बड़े कवि, निबंधकार, समीक्षक और अनुवादक थे, उतने ही श्रेष्ठ संपादक भी सिद्ध हुए। इसीलिए उस युग को द्विवेदी युग के नाम से जाना जाता है। द्विवेदी जी ने सचित्र मासिक पत्रिका 'सरस्वती' को अपने समय की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका बनाने में सफलता पाई थी। 'सरस्वती' 1900 से ही इलाहाबाद के इंडियन प्रेस से निकल रही थी। आरंभ में संपादन का भार एक समिति को सौंपा गया था जिसमें पाँच लोग थे। वे थे बाबू श्यामसुंदर दास, बाबू राधाकृष्ण दास, बाबू कार्तिक प्रसाद, बाबू जगन्नाथ दास और किशोरीलाल गोस्वामी। प्रवेशांक के मुखपृष्ठ पर पाँच चित्र थे - सबसे ऊपर वीणावादिनी सरस्वती का चित्र था। ऊपर बाईं ओर सूरदास और दाईं ओर तुलसीदास तथा नीचे बाईं ओर राजा शिव प्रसाद सितारेहिंद और बाबू हरिश्चंद्र के चित्र थे। एक साल बीतते न बीतते यह स्पष्ट हो गया कि संपादक मंडल से काम नहीं चलेगा तो जनवरी 1901 से बाबू श्यामसुंदर दास उसके संपादक हो गए। 1902 के आखिर में बाबू श्यामसुंदर दास ने आगे से संपादन करने में असमर्थता जताई और उन्होंने सरस्वती प्रेस के मालिक चिंतामणि घोष से नए संपादक के रूप में महावीर प्रसाद द्विवेदी का नाम सुझाया। चिंतामणि घोष द्विवेदी जी के महत्व से परिचित थे। उन्होंने द्विवेदी जी को आमंत्रित किया और द्विवेदी जी 'सरस्वती' के संपादन का दायित्व स्वीकार किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 1903 के जनवरी महीने में 'सरस्वती' का संपादक बनने के साथ ही उसे ज्ञान के सभी अनुशासनों का खुला मंच तो बनाया ही, यह भी सुनिश्चित किया कि प्रकाशन के पूर्व हर रचना की भाषा व्याकरण की दृष्टि से शास्त्रसम्मत हो। उन्होंने भरसक कोशिश की कि पूरी पत्रिका एक ही वर्तनी में निकले। द्विवेदी जी के लिए भाषा-परिष्कार कितनी बड़ी प्राथमिकता थी, इसका अंदाजा 'भाषा और व्याकरण' शीर्षक उनके लेख से लगाया जा सकता है।

अनस्थिरता एक ऐतिहासिक विवाद :

हिंदी भाषा को व्याकरणिक व्यवस्था देना एक महत्वपूर्ण प्रश्न था भारतेंदु काल की भाषा में अत्यधिक अनस्थिरता थी द्विवेदी युग में इस अनस्थिरता को समाप्त करना आवश्यक समझा गया इसी सिलसिले में लेखको की व्याकरण अशुद्धियां दिखाकर उन्हें शुद्ध हिंदी लिखने की ओर प्रेरित किया गया इस प्रयास से उन दोनों भाषा और व्याकरण संबंधी कई महत्वपूर्ण विवाद उठ खड़े हुए। इस सिलसिले में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और बालमुकुंद गुप्त के बीच हुए वाद -विवाद का विशेष महत्व है ।

द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' के नवंबर सन1905 के अंक में 'भाषा और व्याकरण' शीर्षक निबंध लिखकर अपनी भाषा के प्रति चिंता जताई थी। (भाग_06 सं_11) भाषा और व्याकरण शीर्षक से एक लेख लिखा इस लेख में उन्होंने भारतेंदु

हरिश्चंद्र का एक नोटिस से राजा से 50 सितारे हिंदी के विद्यांकुर से गदाधर सिंह की एक विज्ञप्ति से राधा चरण गोस्वामी के भारतेंदु पत्र से तथा काशीनाथ खत्री की एक सूचना से कुछ व्याकरणिक अशुद्धियां का उल्लेख करते हुए उनको सुधारने का प्रयास किया था । द्विवेदी जी के इस लेख में व्यक्त किए गए विचारों में से कुछ का प्रतिवाद बाबू बालमुकुंद गुप्त ने आत्माराम की टें टें नाम से सन 1906 ईस्वी के भारत मित्र के 10 अंक में भाषा की अनस्थिरता शीर्षक निबंध से किया । पंडित गोविंद नारायण मिश्र ने गुप्त जी की भाषा की निष्ठा शीर्षक निबंध का प्रतिवाद 26 मार्च 1906 ईस्वी के हिंदी वगंवासी में आत्माराम की टें_टें शीर्षक निबंध के अंतर्गत किया । इस विवाद में दो दल हुए। द्विवेदी जी के समर्थन में पंडित गोविंद नारायण मिश्र विचार_ विडंबना के लेखक पंडित देवी प्रसाद शुक्ला ,पंडित गिरजा प्रसाद वाजपेई ,पंडित गंगा प्रसाद अग्निहोत्री ,बाबू काशी प्रसाद तथा पद्म सिंह शर्मा आदि थे। गुप्त जी का समर्थन करने वालों में श्री विष्णु दत्त शर्मा, बाबू गोकुलनंद प्रसाद वर्मा, पंडित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ,पंडित गिरधर शर्मा ,पंडित अक्षयवर मिश्र, बाबू गोपाल राम गरमारी और पंडित चंद्रधर शर्मा गुलेरी थे ।इस विवाद में उस समय के पत्रों में सरस्वती प्रयाग भारतमित्र कलकाता हिंदी बंगवासी कलकाता समालोचक जयपुर विश्योपकारक कलकाता आदि पत्रों ने प्रमुख रूप से भाग लिया।

हालांकि यह विवाद एक दृष्टि से देखा जाए तो निरर्थक और सारहीन आधार पर उत्पन्न हुआ विवाद था, जिसमें व्यक्तित्व अहमान्यता की गंध भरी हुई थी। विवाद एक शब्द अनस्थिरता को लेकर हुआ था यह वाद विवाद द्विवेदी युग का ऐतिहासिक विवाद है । इसकी शुरुआत द्विवेदी द्विवेदी जी द्वारा लिखित एक लेख भाषा और व्याकरण से हुई थी । यह लेख सरस्वती में 11 नवंबर 1905 के अंक में था ।इस लेख में द्विवेदी ने भारतेंदु तथा भारतेंदु मंडल के अनेक लेखकों की भाषा की अशुद्धियां दिखाई ।निश्चय ही द्विवेदी जैसे विद्वानों का यह उपक्रम अनेक विद्वानों को अच्छा नहीं लगा। बालमुकुंद गुप्त ने आत्माराम की टें टें के नाम से भरत मित्र में कई लेख लिखकर द्विवेदी जी का विरोध किया ।भाषा संबंधी जो शंका का और प्रश्न गुप्त जी ने उठाया उसे द्विवेदी जी के भक्त चिढ़ गए ।पंडित गोविंद नारायण मिश्र ने आत्माराम की टें टें शीर्षक से हिंदी बंगवासी में निबंध प्रकाशित कराऐंऔर गुप्त जी के वर्णवंश तक पर आक्रमण कर लिएं। द्विवेदी जी ने स्वयं भी क कल्लु अलाहतके नाम से सरगो नरक ठिकाना नहीं शीर्षक सरस्वती में प्रकाशित किया था।

इस वाद विवाद में भाषा और व्याकरण को तो एक नई व्यवस्था मिली थी साथ ही साथ यह संघर्ष उसे युग की साहित्यिक जागृति और तेजस्वी पत्रकारिता को भी घोषित करता है। वस्तुतः मानवीय समाज की कुछ ऐसी निर्बलताएं होती है जो साधारण मनुष्य लेकर विद्वान तक में पाई जाती है निरपक्ष दृष्टि पर कभी ना कभी व्यक्तिगत अहंमजो चाहे किसी के कारण क्योंकि इसके अनेक कारण हो सकते हैं। जिससे मन अकर्मक हो जाता है। इसका उदाहरण आपको हर क्षेत्र मिल जाएंगे चाहे राजनीतिक क्षेत्र हो या सामाजिक साहित्यिक हो या संगीत राजनीतिक क्षेत्र में होने वाली ऐसी घटनाएं इतिहास प्रवाह को ऐसे मोड़ कम या अधिक प्रत्यक्ष नहीं होता है तो परोक्ष परिणाम अवश्य देते हैं। द्विवेदी जी और गुप्त जी के बीच का यह विवाद भी चाहे भाषा और व्याकरण को नई व्यवस्था देने वाले हो, लेकिन जिन पत्रों ने पक्ष विपक्ष में युद्ध के कमान संभाले होंगे उनकी नीतियों में सदा के लिए अच्छी भावना आई होगी जिस मुद्दे का एक पत्र समर्थन करता रहा होगा ,तो दूसरा उसकी काट करता होगा इससे ब्रिटिश शासन को बहुत बल मिला होगा। ऐसा देखा गया है कि पत्र संपादकों की अहं दृष्टि तृष्णागामी दिशा प्रवर्तकों की शक्ति को महत्वहीन और कुंठित करने की चेष्टा करती है और वह बड़े उद्देश्यों को अनदेखा करके छोटे उद्देश्यों को भी प्राप्त नहीं कर पाती ऐसा प्रकोप दृष्टि पत्र सारसुधा निधि महर्षि दयानंद को चरमोत्कर्ष मार्ग में उनके कटु आलोचना द्वारा प्रकाश में आया। उसी प्रकार से के अनेक प्रकरण पत्रकारिता के इतिहास में छिपे पड़े हैं परंतु इस प्रकरणों की दृष्टि से देखें तो ऐसा प्रतीत होता कि इस तरह की पत्र जन जागरण में भी सहायक सिद्ध हुई है।

हिंदी ब्रजभाषा विवाद

हिंदी साहित्य आविर्भाव के समय हिंदी उर्दू विवाद से भी अधिक प्रबल विवाद खड़ी बोली मश और ब्रजभाषा के बीच प्रारंभ हो चुका था । काव्या के क्षेत्र में रीतिकाल में ब्रजभाषा का एक अधिकार हो गया था। ब्रजभाषा के ललित

माधुर्यऔर कोमलकांत पदावली के कायल भारतेंदु बाबू भी थे। उन्होंने पद रचना ब्रजभाषा में की थी परंतु धीरे-धीरे कविता के क्षेत्र में भी खड़ी बोली हिंदी का प्रवेश आधुनिक काल के द्वितीय उत्थान अर्थात भारतेंदु जी के देहावसान के पश्चात हो चुका था। तत्काली साहित्यकारों को यह बात खटक रही थी की गद्य एक भाषा में लिखा जाए और पद्य दूसरी भाषा में। इसके अतिरिक्त ब्रजभाषा क्षेत्रीय भाषा थी ।सुदूर प्रांत के लोग समझ नहीं पाते थे ।अतः पद रचना के लिए ब्रजभाषा को उपयुक्त समझा जा रहा था। पंडित श्रीधर पाठक ने सरल बोलचाल की भाषा में एकांतवासी योगी की रचना कर खड़ी बोली में मार्ग प्रशस्त किया। इसके बाद तो खड़ी बोली के लिए आंदोलन ही उठ खड़ा हुआ। मुजफ्फरपुर के बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री खड़ी बोली के झंडा लेकर उठे खड़े हुए। संभवत1945 विक्रम में उन्होंने खड़ी बोली आंदोलन नाम की एक पुस्तक छाप कर खड़ी बोली में पद रचना को सहज संभव बताया ।उनके विचारों से साहित्य जगत में खलबली मच गई ।ब्रजभाषा के समर्थकों ने खड़ी बोली के विचारों का विरोध किया साहित्यकारों की ओर से ब्रजभाषा का मोर्चा पंडित राधा चरण गोस्वामी संभाला ।उन्होंने खड़ी बोली में अनेक दोस्त दिखाकर उसे पद रचना के लिए अनुपयुक्त बताया। श्रीधर पाठक ने सन 1887 ईस्वी में हिंदुस्तान में गोस्वामी जी का जमकर विरोध किया। इस प्रकार यह विवाद पत्र पत्रिकाओं के लिए एक विशेष चर्चा का विषय बन गया ।उस समय हिंदुस्तान नियमित रूप से प्रकाशित होने वाला पत्र था। हिंदुस्तान में ही पक्ष विपक्ष का लेख नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे। प्रताप नारायण मिश्र ने पंडित विश्वनाथ शर्मा बाबू बालमुकुंद गुप्त आदि ब्रजभाषा के पक्षधर थे। खड़ी बोली के समर्थन में श्रीधर पाठक ,अयोध्या प्रसाद खत्री, केशव राम भट्ट संपादक हिंदुस्तान आदि थे हिंदुस्तान के अतिरिक्त सार सुधानीधि बिहार बंधु पियूष प्रभाह,चंपारण चंद्रिका आदि पद पत्रिकाओं भी इस विवाद से संबंधित लेख प्रकाशित होते थे।

सन 1980 में सरस्वती की प्रशासन में हिंदी काव्य की आलोचना करते हुए मिश्रबंधुओ ने लिखा कि किसी अन्य भाषा की अपेक्षा खड़ी बोली में कविता करना विशेष अच्छा समझते हैं ।सन 1901 ई में सरस्वती के तत्कालीन संपादक बाबू श्याम सुंदर दास ने भी काव्य की अभाव की ओर संकेत किया।

सन 1910 ईस्वी में हिंदी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हुई ।सम्मेलन में हिंदी उर्दू विवाद ब्रजभाषा और खड़ी बोली विवाद नागरी लिपि का प्रचार गद्य भाषा का परिष्कार तथा उसके विविध रूपों से सम्यक बिस्तर पर विचार किया गया।

पंचम साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में खड़ी बोली के श्रेष्ठ कवि श्रीधर पाठक की पुस्तक एकांतवासी योगी की यह पंक्ति_ का कहां जले हैं वह आगी ब्रजभाषा में है। इसी प्रश्न को लेकर पर्यायलोचक और विचारक का प्रसिद्ध विवाद भारतमित्र में कुछ दिनों तक चलता रहा ।विचारात्मक पंडित जगन्नाथ जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी थे इस पत्र उन्होंने श्रीधर पाठक को पर्यायलोचक माना है ।हालांकि डॉक्टर शितीकंठ मिश्र एवं डॉक्टर उदयभानु सिंह ,आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को पर्यायलोचक माना है। इस विवाद को पंडित गोविंद गोविंद नारायण मिश्र अनावश्यक एवं व्यर्थ मानते थे ।उनके अनुसार उसे समय तक ब्रजभाषा मृतप्राय हो चुकी थी ।साहित्य निर्माण के लिए खड़ी बोली का प्रयोग ही उचित है।

हिंदी -उर्दू -विवाद

सन 1839 ईस्वी में हिंदी उर्दू विवाद प्रारंभ हुआ था। उर्दू के साथ हिंदी का भी विवाद गद्य क्षेत्र में हो रहा था ।शुक्ला जी ने लिखा है देश के विभिन्न भागों में मुसलमान के फैसले तथा दिल्ली की दरबारी शिष्टता के प्रचार के साथ-साथ दिल्ली की खड़ी बोली शिष्ट समुदाय का परस्कार व्यवहार की भाषा हो चली थी।

खुसरो ने विक्रम की 14वीं शताब्दी में ही ब्रज भाषा के साथ-साथ खालिसा खड़ी बोली कुछ पद्य और पहेलियां बनाई थी। औरंगजेब के समय में फारसी में मिश्रित खड़ी बोली या रेखता में शायरी शुरू हो गई और उसका प्रचार प्रसार पढ़े-लिखे लोगों में बराबर बढ़ता गया। इस प्रकार खड़ी बोली को लेकर उर्दू साहित्य खड़ा हुआ ।जिसे आगे चलकर विदेशी भाषा के शब्दों में मेल बराबर बढ़ता गया और जिसका आदर्श भी विदेशी होता गया। शुक्ला जी के इस विवेचन से स्पष्ट होता है की खड़ी बोली ना तो ब्रजभाषा से और ना उर्दू से विकसित हुई है बल्कि गुरु देसी आक्रमण से विकसितियां एक

सहज बोली थी जिसका बोलचाल के रूप में बहुत प्राचीन काल से प्रचार में था। उर्दू से खड़ी बोली विकसित हुई है इसका स्पष्ट विरोध करते हुए उन्होंने लिखा है कुछ का यह कहना यह समझना कि मुसलमान के द्वारा ही खड़ी बोली अस्तित्व में आई और उसका मूल रूप उर्दू जिसमें आधुनिक हिंदी गद्य की भाषा अरबी फारसी शब्दों को निकाल कर गढ़ ली गई शुद्ध भ्रम या अज्ञान है ।इस भ्रम तथा आज्ञान का कारण बताते हुए वह लिखते हैं कि जो संवत 1900 विक्रम के पूर्व तक पद में हो रहा वह ब्रजभाषा ही रही और खड़ी बोली वैसे ही एक कोने में पड़ी रही जैसे और प्रांतों का बोलिया साहित्य या काव्य में उसका व्यवहार ना हुआ।

साहित्य के क्षेत्र में खड़ी बोली प्रतिष्ठा सर्वप्रथम गद्य साहित्य के माध्यम से हुई थी जिसका समस्त श्रेय बाबू हरिश्चन्द्र जी को जाता है ।हिंदी उर्दू का झगड़ा 20 वर्ष तक अर्थात भारतेंदु बाबू तक रहा ।हिंदी भाषा का निखरा रूप भारतेंदु जी की कला के साथ ही प्रकट हुआ। उसकाल में हिंदी भाषा शुद्ध साहित्य उपयोगी रुप ही नहीं बल्कि व्यवहार उपयोगी के रूप में भी निखरा।

विभक्ति– संबंधी –विवाद

द्विवेदी युग के प्रमुख समस्या भाषा परिष्कार की थी ।इसके अतिरिक्त वाक्य गठन को लेकर एक आंदोलन चला था वह विभक्ति विचार का आंदोलन था ।इस विवाद का प्रारंभ पंडित अंबिका दत्त व्यास ने सन् 1891ई० में किया था । व्यासजी ने अपने विचार भाषा प्रभाकर नामक पुस्तक में व्यक्त किए और विभक्ति प्रत्यक्ष को प्रकृति से अलग लिखने का औचित्य सिद्ध करने का प्रयास किया ।उन्होंने सन्1909 ई० के आसपास यह विभक्ति संबंधी विचार वाद- विवाद की चरम सीमा पर पहुंच गया। पंडित गोविंद नारायण मिश्र, पंडित अंबिका प्रसाद वाजपेई, पंडित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी ,पंडित अमृतलाल चक्रवर्ती ,आदि विद्वानों ने इसमें सक्रिय रूप से भाग लिया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदीजी ने इसे मत पर अपना कोई प्रबल व्यक्तत्व नहीं दिया। डॉक्टर वेंकट शर्मा के अनुसार उन्होंने इस विवाद का निर्णय लेखको पर छोड़ दिया और अपनी सहमति दी कि अपनी-अपनी सुविधा अनुसार चाहे जिस रूप में विभक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वह व्यर्थ के के झगड़े में अधिक पढ़ने नहीं चाहते थे। क्योंकि उनके सामने अन्य महत्वपूर्ण कार्यों का संपादन और संयोजन करना आवश्यक था ।यह विवाद मुख्य रूप से मुंबई के श्रीवेंकटेश्वर समाचार आदि पत्रों से खण्डन मण्डन द्वारा चला रहा ।पंडित गोविंद नारायण मिश्र ने भी हितवार्ता में भी विभक्ति विचार शीर्षक एक बड़ी विद्वतापूर्ण लेख माला प्रकाशित किया ।इस लेखमाला को सन् 1911 ई० में पुस्तक का रूप दिया गया। इस आधार पर कहा जा सकता है कि द्विवेदी युग भाषा की दृष्टि से समस्याओं का युग था ।खड़ी बोली हिंदी का विकास उसी युग में हुआ था । यद्यपि भारतेंदु मंडल साहित्यकारों ने खड़ी बोली गद्य रचना करके साहित्य निर्माण के क्षेत्र में खड़ी बोली का प्रवेश कर दिया था ।परंतु पद्यसाहित्य में ब्रजभाषा के एक आधिपत्य को वह चुनौती नहीं दे पाए थे ।खड़ी बोली में पद्य प्रचना का करने का श्रेय पंडित श्रीधर पाठक को है। पाठक जी ने अन्य साहित्यकारों को भी इसके लिए प्रोत्साहित किया था। परिणाम यह हुआ कि संगठित रूप से पद्यसाहित्य में खड़ी बोली को प्रतिषि् ठत करने का आंदोलन का सूत्रपात हो गया ।आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती के माध्यम से इस कार्य को विशेष दिशा और गति प्रदान की थी। वातावरण भाषायी विवाद की अनुकुंज से गुंजित होने लगा। खड़ी बोली को पद्यके क्षेत्र में ब्रजभाषा एवं गद्य के क्षेत्र में उर्दू से कड़ा संघर्ष करना पड़ा था ।पंडित गोविंद नारायण मिश्र अत्यंत ही उलझे हुए विचारों के दूरदर्शी साहित्यकार थे ।समय के गति को बहुत अच्छी तरह समझते थे और पहचानते थे ।उन्होंने यह बहुत अच्छी तरह से समझ लिया कि आने वाले युग में साहित्य रचना की दृष्टि से राष्ट्रीय जन जीवन को एक सूत्र में बांधने की दृष्टि से एकमात्र खड़ी ही सक्षम है। यही कारण है कि उन्होंने तत्कालीन भाषाई विवाद को तार्किक ढंग से खड़ी बोली का पक्ष लिया और भाषाई विवाद का समाधान निकालने में उन्होंन महत्वपूर्ण योगदान दिया। केवल भाषागत समस्याओं का समाधान की दृष्टि से ही नहीं बल्कि भाषा परिष्कार की दृष्टि से मिश्रा जी ने बहुत श्रम किया।

एक ऐसे ही विवाद अप्रैल 1904 ई० में सरोजिनी और राजपूत शिर्षक से भारत जीवन एवं राजपूत के संपादकों के विवाद की विस्तृत चर्चा की गई है ।जिसमें ज्योति रविंद्रनाथ ठाकुर का बंगला भाषा में लिखित प्रसिद्ध ग्रंथ सरोजिनी

नाटक का हिंदी अनुवाद बनारस के भारत भारत जीवन के संपादक बापू रामकृष्ण खत्री ने प्रकाशित किया था ।जिसमें 13 ०3 ई० ईस्वी में चित्तौड़ के सिंहासन पर राजा लक्ष्मण सिंह आसींन थे ।उनके चाचा का नाम भीम सिंह था ।भीम सिंह की रानी पद्मिनी की सुंदरता पर लुब्ध होकर दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन ने दोबारा चड़ाई कर दी ।घोर संग्राम हुआ। लक्ष्मण सिंह के 12 पुत्र हैं उनमें 11 लड़ाई में मारे गए ।क्षत्रियों का पराजय हुआ। अतः मुसलमान से परित्राण पाने की इच्छा से पद्मिनी समेत सहस्रश राजपूत रमणीया अनल में प्रवेश कर गई। इस कथा के आश्रय पर सरोजिनी नाटक लिखा गया है __इस नाटक में लक्ष्मण सिंह की कल्पित कन्या का उल्लेख है उसका नाम सरोजिनी है ।उसी के नाम पर पुस्तक का नाम रखा गया है।

अंततः यह विवाद इतना बढ़ गया कि इसके निराकरण के लिए दोनों पक्षों ने आपसी सहमति से सर्वश्रेष्ठ आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ,बाबू श्याम सुंदर दास , राधाकृष्ण दास को पांच नियुक्त किया। परन्तु द्विवेदीजी दो पंचों में मतएक रह। इसलिए इस टिप्पणी में द्विवेदी जी एवं उपरोक्त दोनों पंचों के निर्णय का निर्णय भी दिया गया। निर्णय के एक-एक कॉपी दोनों पक्षों में भेज दी गई तब जाकर इसी बात का अंत हुआ।

विशिष्ट अवसर और समस्याएं

हिंदी साहित्य का द्विवेदी -युग पत्र -पत्रिकाओं का युग था उसे समय के पत्र पत्रिकाएं ही वैचारिक द्वंढ का अखाड़ा बनती थी। यह कारण है उन दिनों साहित्यकार अपने विचारों को पूर्वग्रह से मुक्त होकर स्वतंत्रता पूर्वक अभिव्यक्त करने का अवसर मिला था।

एक प्रकार से हम कह सकते हैं कि द्वितीय युग के साहित्यकारों को अपने भाव अव्यक्त करने का एक विशेष अवसर मिल जाता था जैसे आत्माराम की टें-टें निबंध माला सन 1905 1906 में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती पत्रिका में भाषा की अनस्थिरता नामक एक लेख लिखकर तत्कालीन हिंदी साहित्य सेवियों को भाषा को परिनिष्ठित करने की प्रेरणा दी ।उनका उद्देश्य भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्र अथवा किसी अन्य साहित्यकारों की आलोचना नहीं थी परंतु भारतमित्र के तत्कालीन संपादक बाबू बाल मुकुंद गुप्तजी ने भाषा की अनस्थिरता लेकर बड़ी विशाद एवं तीखी आलोचना आत्माराम की टें टे के नाम से की थी। गुप्तजी जैसे तीव्र समालोचक के विरोध किसी हिंदी लेखक को लिखने का साहस नहीं होता था। यही नहीं स्वयं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को भी मोन भाव ग्रहण करना पड़ा। उस समय पं शिवदत्त शर्मा आदि साहित्यकार के अनुरोध पर मिश्राजी बगंवासी में गुप्त जी के आलोचना को प्रत्यालोचन कर गुप्त जी का मुंह बंद किया था।आत्माराम की टें टे लेखमाला मात्र प्रत्यालोचन की तीक्ष्ण भगिंमाओं और वयंग्यव्यक्तियों की संग्रहालय की नहीं आपितु हिंदी व्याकरण की विशद चर्चा भी इसमें हुई हैं। व्याकरण की विवेचना शब्द की शुद्धता प्रमाणित करने के लिए की गई है ।भाषा एवं व्याकरण के सनातन संबंधों की चर्चा भी इस लेखमाला में की गई है ।पंडित गोविंद नारायण मिश्र जी की विभक्ति विचार उनकी श्रेष्ठ कृतियों में से एक है ।पंडित अंबिका दत्त व्यास की व्याकरण संबंधित पुस्तक भाषा प्रभाकर त्रुटियां पर की गई आलोचना की प्रतिक्रियाएं यह हुई थी सन 1892 ईस्वी में इस प्रश्न को लेकर साहित्यिक विवाद उठ खड़े हुए थे ।उस समय अधिकतर लोगों ने मिश्रा जी के मत को स्वीकार किया था। परंतु 17 वर्ष बाद अर्थात 1909 ईस्वी में पंडित सखाराम गणेश देउस्कर के विभक्ति प्रत्यय लेख में यह विवाद फिर उभर कर सामने आया । तब मिश्रा जी ने पुनः अपने पक्ष के समर्थन में को लेख लिखा और बाद में उसे परिशिष्ट शीर्षक देकर विभक्ति विचार पुस्तक को संग्रहित किया ।इससे उन्होंने पंडित रामावतार शर्मा की हिंदी व्याकरणसागर पुस्तक की भी आलोचना की है।

द्विवेदी जी मराठी, गुजराती और बांग्ला के भी ज्ञाता थे। वे हिंदी, उर्दू, संस्कृत, मराठी और अंग्रेजी के भी जानकार थे और इन सातों भाषाओं के साहित्य से वे स्वयं को अद्यतन रहते थे और उन भाषाओं के साहित्य की समालोचना कर सरस्वती के पाठकों को भी समृद्ध करते थे। द्विवेदी जी की संपादन कला की विशेषता थी कि उन्होंने साहित्य को कलाओं से जोड़ा। द्विवेदी जी ने संगीत कला पर स्वयं कई लेख लिखे।'सरस्वती' की संपादकीय टिप्पणियाँ और समालोचनाएँ

महावीर प्रसाद द्विवेदी स्वयं लिखते थे और उनकी समालोचना की साख इतनी थी कि जिस भी किताब की वे प्रशंसा कर देते थे, उसकी प्रतियाँ देखते-देखते बिक जाती थीं।

भाषा-परिमार्जन के साथ ही सर्जनात्मक साहित्य की हर विधा से लेकर साहित्य समालोचना के लिए द्विवेदी जी के संपादन में 'सरस्वती' ने युगांतकारी भूमिका निभाई। उदाहरण के लिए साहित्य की विधाओं - कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबंध, जीवनी, आलोचना के समांतर समाज शास्त्र, अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, नागरिक शास्त्र, इतिहास और आधुनिक ज्ञान-विज्ञान को भी पत्रिका में महत्व दिया और इस तरह उसका फलक विस्तृत कर दिया। अनेक रचनाकारों को सबसे पहले द्विवेदी जी ने ही अवसर दिया और जिनकी कविता या कहानी या लेख 'सरस्वती' में छपते थे, वे भी चर्चा में आ जाते थे। 'सरस्वती' के रचनाकारों में श्यामसुंदर दास, कार्तिक प्रसाद खत्री, राधा कृष्ण दास, जगन्नाथ दास रत्नाकर, किशोरीलाल गोस्वामी, संत निहाल सिंह, माधव राव सप्रे, राम नरेश त्रिपाठी, अयोध्या सिंह उपाध्याय हरिऔध, मैथिली शरण गुप्त, गया प्रसाद शुक्ल स्नेही, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला,, महादेवी वर्मा, राय कृष्ण दास, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा नवीन, रामधारी सिंह दिनकर जैसे साहित्यकार शामिल थे।

संदर्भ ग्रंथ

1. सिंह इंद्र सेन :-आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और साहित्यिक पत्रिकारिता :-विश्वविद्यालय प्रकाशनवाराणसी:-ISBN-81-7124-248-0
2. सिंह जया :-भारतेंदु और द्विवेदी युगीन भाषा चिंतन और पंडित गोविंद नारायण मिश्र:- जय भारती प्रकाशन ईलाहाबाद:ISBN-978-81-899-24-93
3. यामिनी रचना भोला:- पत्र और पत्रकारिता:- डायमंड बुक्स प्राइवेट लिमिटेडISBN-81-288-1203
4. चौबे कृपा शंकर:- महावीर प्रसाद द्विवेदी और सरस्वती हिंदी समय महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालयका अभिक्रम (https://www.hindisamay.com)